झारखण्ड के आदिवासी और उनके गोत्र

डॉ॰ सिकरादास तिर्की

2003

BVP - 1897
16|1|18

(4/9)

प्रस्तावना

झारखण्ड भारत का **"हीरखण्ड"** है । इस प्राचीनतम भूखण्ड को धरती माता ने प्राकृतिक प्रकोपों से सुरक्षित एवं मानवानुकूल सभी तरह के खाद्य पद्धार्थों, वन, पर्वतों, नदी, नालों, पेड–पौधों, फल फूलों, पशु–पक्षियों, खान–खनिजों आदि से श्रृंगार और सजा रखी है । यहीं झारखण्ड की धरती को आदिकाल में आदिवासियों को ईश्वर ने वरदान स्वरूप उपलब्ध कराया था। आज पुनः झारखण्ड राज्य चलाने का पूर्ण अधिकार प्राप्त हुआ है, बिहार से अलग होकर। हमें अपनी मातृभूमि, अपने राज्य एवं यहाँ के निवासियों के बारे में सही–सही जानकारी लेना अपना अधिकार के साथ ही साथ कर्त्तव्य भी बनता है ।

"स्वर्ग" सा इस झारखण्ड में आदिवासियों के आने की लोक कथाएँ हैं। झारखण्ड राज्य एवं भारत के प्रथम निवासी आदिवासी हैं इसका प्रमाण उनके गोत्र हैं, जिसमें अर्थ के रूप में पहचान और पुरातन की रहस्य छूपी है । जिसमें भारतीयता की गहरी छाप अंकित है । हरेक आदिम जाति और उनके गोत्र के बारे में समुचित जानकारी आदिवासियों के इतिहास के साथ–साथ झारखण्ड का इतिहास संकेत करता है। उन जनजातियों एवं संस्कृति को समाज में, झारखण्ड के इतिहास में उचित स्थान मिलना आवश्यक है। प्रत्येक आदिवासी अपना अधिकार समझे, समाज में अपना स्थान पहचाने और अपने गोत्र की गरिमा को कायम करें ।

मैं नही जानता कि इसमें मैं कितना सफल हो पाया हूँ। परन्तु इतना विश्वास अवश्य है कि यह पुस्तिका झारखण्ड के आदिवासियों को आकर्षित करेगा। उन्हें अपने–अपने गोत्र को सोचने–समझने तथा चिह्नित करने की प्रेरणा अवश्य मिलेगी ।

सिकरादास तिर्की

गोत्र उत्पत्ति कथा

आदिवासी परम्परा के अनुसार झारखण्ड के उराँव, मुण्डा, खड़िया हो एवं संताल आदि एक ही पूर्वज की संतान हैं। आदिकाल में एक ही माता पिता की संतान भिन्न–भिन्न जानवरों तथा चिड़ियों से अपना संबंध या पहचान बनाए रखते थे। वही पहचान उसकी संस्कृति जाति, प्रतिभा एवं नाम था। आगे चलकर वही कई पहचान मूल बनते गए। जो आज गोत्र के रूप में वर्त्तमान हैं। अतः एक ही गोत्र से अनेक गोत्र की उत्पत्ति हुई। एक गोत्र अथवा टोटेम के सब आदमी एक पूर्खे के औलाद हैं। यह गोत्र वंशधारा पितृ प्रधान है या संतान में पिता का ही गोत्र चलता है।

गोत्र या **"टोटेम कोई जानवर अथवा पौधों जीव या चीजों से संबंधित हैं, जिसे अन्यत्र विश्व के आदिवासी अपने पूर्वज मानते हैं।"** झारखण्ड के आदिवासियों के साथ भी ऐसी ही बात है। गोत्र से संबंधित जानवर एवं चिड़िया इनके पूर्वज हैं या नहीं हैं ? परन्तु कोई गोत्र से संबंधित जानवर तथा पक्षी पर आरूढ़ व्यक्ति उस गोत्र वालों का पूर्वज है। नाम के साथ गोत्र का अटूट संबंध है जो उन्हें लुप्त होने नहीं देती है। वह जानवर अथवा चीज का संकेत है । इस गोत्र की उत्पत्ति के पीछे लोक कथाएं एवं दन्त कथाएं हैं। जो इनकी संस्कृति, जीवन घटनाएं, ऐतिहासिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक पर आधारित हैं। लोक कथाओं से प्रमाणित होता है कि सृष्टिकर्त्ता या सिरसिता (ईश्वर) या सिड़बोंगा अथवा धर्मेश ने सर्व प्रथम सौरमंडल व धरती और आकाश की रचना की। तब उन्होंने दिन और रात बनाई। उस समय धरती के ऊपर पानी ही पानी था। ईश्वर ने उस पानी में मच्छली, केकड़ा, कछुवा और जोंक आदि जल जान्तुओं एवं कमल आदि का सृजन किया ।

भगवान इधर से उधर निष्प्रयोजन पत्ता का नाव से घुमा (भ्रमण) करते थे। इस भ्रमण के दौरान उन्हें कहीं विश्राम नहीं मिल पाता था और न ही उनके कोई संगी–साथी। तब ईश्वर ने लखी ठाकुराइन (अपनी पत्नी) से पानी के ऊपर मिट्टी लाकर धरती बनाने तथा उस पर वन–वृक्ष, पेड़–पौधे, नदी–नाले, पशु–पक्षियों एवं इसके बाद मनुष्य की सृष्टि की बात सोची। धरती बनाने का प्रस्ताव को (परमेश्वर) ने सबसे पहले केकड़ा के पास रखा। उसके बाद जिया मछली के पास रखा। परन्तु इन दोनों ने इसका विरोध किया अथवा असफल हुए। अंत में चेरा (जोंक) की मदद से मिट्टी पानी के ऊपर लाकर धरती बनी। उस धरती पर ईश्वर ने सबसे पहले गाछ–वृक्ष, वन–पर्वत एवं विभिन्न पशु–पक्षियों की सृष्टि की। इस सुन्दर सृष्टि में ईश्वर ने मानव स्वरूप स्वयं की सुसृष्टि की, इसकी रचना क्रम में ईश्वर की अनुपस्थिति में एक पंखराज घोड़ा ने जाकर अपूर्ण मानव को लात मार कर गिरा देता था। कई बार ऐसा ही हुआ। तब ईश्वर को मनुष्य की रक्षा के लिए कुत्ते की आवश्यकता पड़ी। इसी कुत्ता के देख–भाल में ईश्वर ने एक लड़का और एक लड़की मनुष्य की रचना कर्म पूरा की। इसके बाद उस घोडे को प्रभु ने शाप दे दिया कि किसी दिन मनुष्य तुम्हारी पीठ पर सवार होगा । इसी भाँति मानव परमेश्वर के आदेशानुसार अथवा वरदान स्वरूप अलग–अलग जानवरों एवं पक्षियों को अपना सवारी बनाया ।

मनुष्य की सृष्टिपूर्ण होने के बाद ईश्वर ने मनु ष्य को अपने ही पैरों पर खड़ा होकर जीवन क्रीड़ा के लिए स्वतंत्र कर दिया एवं अनावाश्यक सृष्टिका विनाश करने के लिए ईश्वर ने अग्नि वर्षा की। (इसका प्रतीक फागु पर्व के प्रतिवर्ष मनाया जाता है और पतझड़ धरती रूपी नारी का धर्म।) इस समय मनुष्य को उसने केकड़ा के बिल में तथा दलदल में छिपा रखा था। लेकिन मानव की इस सृष्टि को खत्म करने के लिए विपरीत शक्ति लगी रही। जिसे राक्षस के नाम से जाना जाता रहा है। इस बार राक्षस जब मनुष्य का अन्त करना चाहा तब मनुष्य ने जंगल की ओर भागकर अपने जीवन की रक्षा की । इस क्रम में आदमी रास्तें में डर कर

पनुः केकड़ा के बिल के सपीम ही जा छिपा। (जहाँ मनुष्य राक्षस के भय से छिपा हुआ था।) पहुँचा और बिल बनाते हुए केकड़ा से राक्षस ने पूछा – क्या तुमने इधर से मनुष्य को जाते हुए देखा ? केकड़ा स्वयं डर गया। उसने अपनी सुरक्षा के लिए झट से कह दिया कि – हाँ महाराज इधर से ही तो गुजरे हैं । देखिए मेरे आँगन में कीचड़ उठा गये हैं। यह सुनकर मनुष्य भयभीत दुबक पड़ा था और राक्षस के आगे निकल जाने के बाद फिर मनुष्य केकड़ा के बिल से निकलकर आगे बढ़ा। जाते–जाते फिर रास्ते में डरे–थके दलदल के समीप जा छिपकर विश्राम कर रहा था । राक्षस उसी ओर आया पर सर्व प्रथम उसी दलदल के समीप छोटा सा गढ़ा में पानी की कमी के कारण जिया मछली छटपटा रही थी कि राक्षस ने उस गढ़े की मछली दिखाई दी से जाकर पूछा – हे मछली क्या तुमने इस ओर से मनुष्यों को गुजरते हुए देखी है ? वह भी अपनी जान बचाने के लिए जल्दी से बोली – हाँ महाराज ! इधर से ही तो चले गए । देखिए न ! डोभा का पानी को उसने मटिया मेलकर दिया है । मछली के कहने पर राक्षस फिर आगे बढ़ा कि मनुष्य भी डरके मारे पुनः निकल गया, कही राक्षस वापस तो न आ जाये। तब तक मनुष्य पूरी तरह से थककर वन के शरण में चला गया । वन में आकर साखु वृक्ष के खिले फूलों और पत्तियों की झाड़ी में छीपकर ईश्वर या सृष्टिकर्त्ता की याद की । ईश्वर ने भी इसकी थकान को देखकर उसकी रक्षा के लिए मकड़ा का रूप ले लिया । इस मकड़ा ने विनाशकारी राक्षस के जाते हुए रास्ते में अपना जाल बिछाकर छेक दिया । वहाँ पहुँचने पर राक्षस ने मकड़ा से पूछा – हे मकड़े क्या तुमने इधर से किसी मनुष्य को भागते हुए देखा है ? मकड़ा ने कहा – हे महाराज ! इधर से कोई मनुष्य नहीं गया और न आया है । नहीं तो मेरा यह बनाया जाल अवश्य ही टूट गया होता । इस मकड़े की बात सुनकर राक्षस वापस लौट गया और मनुष्य की जान साखू फूल पत्तों से लदे वन में बच गई । इन्ही लड़का और लड़की से मनुष्य की बृद्धि हुई । इन्हीं एक लड़का और लड़की के प्रतीक के रूप में नव–विवाहित वर–वधु को फागुपर्व और सरहुल में अवश्य रूप से लाया जाता है । उस वर्ष लड़का फागुपर्व लड़की के गाँव का मनाता है ।

इसी वन में रहकर बाद में मनुष्य के जीवन यापन के लिए सर्वाधिक उपयोगिता वन एवं सखुआ वृक्ष ही रहा । सखुआ के बीज भोजन के लिए उपयोग में लाया जाता था । सखुआ बीज से तेल तथा दवा के रूप में भी प्रयोग किया जाता था । अभी भी झारखण्ड के आदिवासी समाज में सखुआ का महत्त्व मनुष्य के जन्म से मृत्यु के बाद तक यथावत् है । मनुष्य अपनी जान की रक्षा फूल–पत्तों की बीच कर ही ली । साथ ही साथ भविष्य में इनके आर्थिक जीवन में साखू फूल पत्तें या पेड़ पौधे, सृष्टिकर्त्ता द्वारा प्रदत्त तोहफा या कृषि साबित हुआ । इस तोफह को प्रतिवर्ष मनुष्य तबतक जीवन में उपयोग नहीं करता जब तक की उस सृष्टिकर्त्ता और अपने पूर्वजों के नाम स्मरण अर्पण नहीं कर देते हैं।

यहीं से धर्म की तथा साखू फूल–पत्तों की भी पूजा शुरू हुई । इस समय राक्षस ने लौटते समय केकड़ा और मछली को शाप दे दिया कि – हे केकड़ा तुमने मुझे ठगा है इसलिए तुमको मनुष्य पकड़कर तुम्हारे ही बड़ी उंगली को तोड़कर तुम्हारे पेट में घोंप कर मार डालेगा । इसी तरह उसने जिया मछली को भी कहा – कि मनुष्य तुम्हें अपने नोक से या नाखून से तुम्हारे सिर चीप कर मार डालेगा । अतः इस घटना की स्मृति को बरकरार रखने तथा पूर्वजों को याद दिलाने के लिए प्रकृति की पूजा **सरहुल पर्व** आरम्भ में मछली–केकड़ा का शिकार या संहार किया जाता है। उराँव परिवार में कोपनले के दिन या उपवास के दिन मादा केकड़ा को जिंदा लाकर चुल्हा के ऊपर टांगा जाता है। साखू फूल की पूजा के दिन जिया मच्छली का सब्जी इमली के साथ पूजा में चढ़ाया जाता है ।

ऐसी ही जीवन घटनाएँ एवं ऐतिहासिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक स्वरूप कायम करने के लिए आदिवासियों ने ईश्वर के आदेशानुसार एक माता–पिता के पुत्र–पुत्रियाँ अलग–अलग जानवरों एवं चिड़िया से संबंध रखते थे । जो उनकी सवारी थी और इसी वाहन के नाम व्यक्ति का नाम भी हुआ करता था। इसका अच्छा उदाहरण आज भी झारखण्ड का लोक नाटक (नृत्य) छो या छऊ नृत्य

के पात्रों के चरित्र, अस्त्र–शास्त्रादि के नाम से ही जाने जाते हैं। जैसे–हंती छो (हाथी छो), बिंग छो (साँप छो), कुला छो (बाघ छो), आःसार छो (तीर धनुष छो), कापि छो (फारसा छःऊ) खचरा छो (क्रोधी छऊ), रागोसा छो (राक्षस छऊ) रूतु छो (बाँसरी छऊ), बन्दरा छो (बन्दर छो), कुड़ी छो (लड़की छऊ) इत्यादि ।

मुण्डाओं का इतिहास से ज्ञात होता है कि छोटानागपुर या झारखण्ड (सुतियाम्बे) में मुण्डा राजाओं ने प्राचीन काल में उपर्युक्त ऐतिहासिक, राजनीतिक आदि की गठन के लिए ही गोत्र की पुनर्स्थपना की थी । यहीं से इनके गोत्रों की संख्या में वृद्धि हुई । आदि या प्रागैतिहासिक काल से ही भारतीय इतिहास के प्राचीन काल एंव मध्यकाल तक झारखण्ड के आदिवासियों का अपना–अपना गोत्र पंचायत था। जिसे पड़हा कहा जाता रहा है । कई पड़हा को मिलाकर एक पड़हा मंडल था । जैसे बाईस पड़हा, बारह पड़हा आदि । अनेक पड़हा मंडल मिलाकर एक महा पड़हा मंडल था और कई महा पड़हा मंडल का एक संसार होता था । इसी संसार से झारखण्ड के आदिवासियों को संसार कहा जाता है । आधुनिक काल में आदिवासियों के बीच वह पड़हा अवशेष के रूप में ज्यों का त्यों वर्त्तमान है । सन् 1996 ई० में भूरिया कमिटी ने इसकी मान्यता को पुनः स्थापित कर दिया है ।

मुण्डारी लोक कथा "सोसोबोंगा" एवं उराँव या कुडुख डण्डि लोक गाथा डाण्डा कटना के पात्र केरकेट्टा, ढेंचुवा, कौआ, गीध, लंग पंक्षी–बोचो पक्षी आदि के नाम से संबंधित गोत्र के व्यक्ति थे । ये पक्षियाँ उनकी सवारी थी जिसका वर्णन उसी पक्षी के जीवन पर आधारित मिलता है। अतः आज भी उराँव तथा उराँव मुण्डा समुदाय के लोग अपने पड़हा सम्मेलनों एवं ऐतिहासिक, साँस्कृतिक मेलों में अपने गोत्र के प्रधान को लकड़ी या काठ के बने गोत्र से संबंधित जानवर या पक्षी पर बैठाकर ले जाते हैं ।

जिस भाँति मानव शास्त्रियों ने झारखण्ड के सम्पूर्ण आदिवासियों को प्रोटोआष्ट्रेलाइड प्रजाति में शामिल किया है। इसी तरह जनश्रृति है कि जानवरों और पक्षियों में भी उनकी सृष्टि अथवा वंश के अनुसार प्रजातियाँ हैं । बाघ या सिंह चीता, बिलार और बिल्ली आदि एक प्रजाति के जानवर हैं । इनमें से श्रेष्ठ बाघ या सिंह है । यह बाघ पार्वती की सवारी है । **"लकड़ा"** गोत्र का अर्थ इसी बाघ से है । इसका (लकड़ा का) अन्य रूप बण्डो या रूण्डा है। नाम के आधार पर इसका अर्थ जंगली बिलार होता है । परन्तु लकड़ा, रूण्डा और बंडो गोत्र के लोग सिंह व वाघ, जंगली बिलार और बिल्ली को नहीं मारते है और न ही उसका मांस खाते हैं। लकड़ा गोत्र झारखण्ड के उराँव मुण्डा, लोहरा आदि आदिवासियों में मिलता है। ये गिलहरी को भी नहीं खाते हैं । जनश्रृति है कि इसी गिलहरी ने श्री राम जी को सीता का पता बताया था ऐसी ही कुछ और भी गोत्रों का विश्लेषण किया जा सकता है । जैसे–तिर्की, तिरकी व तिरकि गोत्र यहाँ के विभिन्न जनजातियों में मिलता है । **"तिर्की"** का मूल अर्थ चिह्नित या दागा हुआ **"साँड़"** होता है । जो महोदव का सवारी है । परन्तु विभिन्न प्रकाशित पुस्तकों में तिर्की का अर्थ अलग–अलग अव्यवहारिक रूप में मिलते हैं। छोटानागपुर के आदिवासी और उनके गोत्र नामक पुस्तिका में "तिरकि" = भूरे रंग का छोटा कपोत, मुण्डा वर्ग के लिए आया है । परन्तु होरो=कश्यप, कुजुरी=प्राान, हाऊ=तोपनो या देमता, पन्डुबिं =नाग का उराँवीकरण बतलाया गया है । ऐसा भी देखा जाता है कि अन्य मुण्डा लोग उपर्युक्त गोत्र वालों को उराँव ही मानते थे । अतः इन्हें उराँव मुण्डा माना जा सकता है । इसी तरह मानव शास्त्रियों ने मानक गोत्र के आधार पर आदिवासियों की जाति निर्धारित हैं । "इनसाइक्लोपिडिया" में बतलाया गया है कि किसी समय मुण्डा, उराँव और हो एक परिवार के रूप में रहते थे। हो सकता है कि आदि काल में पद एवं कर्म के अनुसार जाति की बँटवारा तक एक परिवार के रूप में रह होंगे । बाद में इसी पदवी से ही अलग–अलग जाति का रूप ले लिया होगा । यही कारण है कि झारखण्ड के आदिवासियों को

मुखाकृति क्षेत्रगत एवं भेषभूषा की दृष्टिकोण से अमुख व्यक्ति लातार दिसुम (बुन्डु—तामाड) का है, अमुख आदमी, चेतन दिसुम (नगुरी क्षेत्र) का है एवं अमुख व्यक्ति हसादः क्षेत्र और सिंहभूम क्षेत्र आदि का है। परन्तु उपर्युक्त तमाम क्षेत्र के व्यक्ति विशेष कर पुरूषों को एक जगह जमाकर लेने के बाद उसकी जाति निश्चित करना अत्यन्त कठिन हो जाता है । इसके अलावे कुछ गोत्र उराँव, लोहरा, मुण्डा, खड़िया आदि आदिवासियों में एक समान अर्थों में व्याप्त हैं ।

तिरकी का अर्थ अमलतास या बन्दरलौरी, उराँव वर्ग के लिए आया है । दूसरी पुस्तक झारखण्ड विराशत में तिर्की=छोटा चूहा, **प्रि हिस्ट्री ऑफ छोटानागपुर** नामक पुस्तक के में तिर्की=चूहा एवं कुडुख शब्दकोश नामक किताब में तिर्की=बाज पक्षी या रिचिपक्षी अथवा शिकारी पक्षी। ये अर्थ भी स्थान विशेष की दृष्टिकोण से सही हैं। उराँव दन्तकथा में हनुमान को महादेव का भगीना माना गया है ।

In further suppor of his suggestions that the oraons of Chotanagapur, before theri migration to this plateau formed a part of the aboriginal army fo Ram, it has been pointed out that there are to be found some oraons who have as their tribal to terms Monkeys (Hanuman and Gari) and who do not kill or even injure a Monkey. (An Historical out lie of Pre-British Chotanagpur, by Mangobinda Banerjee, Page 152).

हनुमान का जन्मस्थान आंजनी झारखण्ड में हैं । अमलताश=बन्दर का डण्टा या हनुमान का गद्दा है । छोटा चूहा का अभिप्रायः चूहे के छोटे बच्चे या चिड़िया आदि जिसकी दृष्टि, नयन व आँख नहीं खुली हो, उसे तिर्की गोत्र वाले शिकार नहीं करते और न खाते हैं। अतः छोटा चूहा का सम्बन्ध गोत्र के अर्थ से नहीं है। गर्भधारण की हुई बकरी इत्यादि की हत्या नहीं करते तथा पूजा में नहीं लाते और न उसका मांस ही खाते हैं । मुण्डा, उराँव तथा अन्य जनजाति के लोग आषाढ़ में केकड़ा और भादोमास में खरगोश का शिकार नहीं करते

तथा उसका माँस नहीं खाते हैं । उस समय केकड़ा और खरगोश बच्चा देती हैं । इसका मतलब सृष्टि की गति में अन्धाधून विनाश नहीं करना है। यही कारण है कि आदि धर्म या सरना पूजा के अन्तर्गत कटली या कुवारी मुर्गी, चेंगना, पाठी बकरी–बकरा आदि की बलि दी जाती है। कुछ पूजा ऐसी हैं जिनमें बिलकुल बूढ़े जानवरों की बलि चढ़ाई जाती है। अतः झारखण्डी सरना धर्म पर्यावरण रक्षा से युक्त है। पर्यावरण रक्षा इनके धर्म का पहला अंग है। ईश्वर या माता–पिता की सृष्टि मनुष्य वंश का शरीर में, जीवन में, मानव समुदाय में, अन्न में, धन में, पशु धन में, यात्रा में, कृषि में इत्यादि में स्वच्छ, शुद्ध बृद्धि एवं सुख की कामना ही ईश्वर की पूजा है ।

काल क्रम के अनुसार झारखण्ड के आदिवासियों की जीवन घटनाओं के साथ विभिन्न जगहों में भिन्न–भिन्न गोत्रों की उत्पति हुई। जिस कारण आदि गोत्र के साथ कई पर्यायवाची अर्थ जुड़ते गये हैं । दक्षिण भारत में श्री राम जब सीता की तलाश में थे। तब समुद्र पार करते समय उन्हें विभिन्न जल जान्तुओं पर सवार होकर जाना पड़ा था। राम–रावण युद्ध में राम–लक्ष्मण को छोड़कर पूरी सैनिक रूप बदलकर गई थी। अतः जल जान्तुओं एवं भेषभूषा के आकार या रूप के अनुरूप उनके नाम गोत्र निकले । यही परम्परानुसार आज भी झारखण्ड की आदिवासी स्त्रियाँ पुरूष भेषभूषा में जनी शिकार एवं बुढ़ी करम पर्व करती हैं । ओझा–मति भगत प्रशिक्षार्थी युवक (पुरूष) लड़कियों के रूप में डेवठन पूजा के लिए चन्दा करने निलकते हैं आदि ।

ऐतिहासिकता

झारखण्ड के आदिवासियों को भारत के संदर्भ में रखकर अपने अस्तित्व के लिए उनके गोत्र पर गंभीरता से विचार करना चाहिए । क्योंकि यहाँ (झारखण्ड) के आदिवासी भारत के आदिवासी हैं तथा आदिवासी संस्कृति ही भारत की संस्कृति है। यह संस्कृति गाँव में निवास करती है। जो गोत्रों पर आधारित है । यही गोत्र आदिवासियों का वर्ग है । अतः गोत्रों के अर्थ के आधार पर आदिवासियों के इतिहास की पूनर्स्थापना की जा सकती है । सामान्यतः आदिवासी वर्ग राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक, ऐतिहासिक और राजनीतिक जैसे कई रूपों में शोषित हैं। परन्तु इस शोषण के भय से हम अपनी संस्कृति, धर्म एवं गोत्र के अर्थ बदल कर अलग पहचान बनाते जाना अपनी परम्परा, अस्तित्व एवं आस्मिता से कट जाने अथवा भटक जाने की संभावनाएँ बन सकती हैं ।

जनजातियों की संस्कृति, उनका लोक साहित्य या इतिहास साक्षी है कि इनके पर्व **"करम"** की लोक कथा में मुख्य रूप से करमा और धरमा दो भाई थे । बड़े भाई करमा को धन के लिए या जीवन निर्वाह हेतु वनवास या परदेश जाना पड़ा था । करमा की सेवा में छोटा भाई धरमा भी साथ में गया था । इन्होंने जब धनार्जन कर करम पर्व के उपलक्ष में स्वदेश लौट रहे थे, तब वे दोनों अपने गाँव की सीमा घर रास्ते में भादो का कादो (कीचड़) में फंस गए । करमा ने अपने छोटे भाई धरमा को धनादि की सुरक्षा सौंपकर गाँव की ओर बढ़ा । गाँव–घर के बन्धुगण करमापर्व उल्लास में या करमराजा की सेवा में लीन थे । इस खुशी को करमा के आगमन ने दूनाकर दिया । परन्तु करमा को यह एहसास नहीं हो सका । क्योंकि उनका दिलो–दिमाग परिस्थिति वश असंतुलित हो गया था । उसने अपने भाईयों को करमपर्व की उमंग में

डूबे हुए देखकर आँगन या अखाड़े में गाड़ी गई करम डालियों को उखाड़कर फेंक दिया। जिसकारण गाँव में शोर मच गई । इसकी आहट मिलने पर धरमा को चिंता हो गई कि बड़े भाई कोई मुसिबत में पड़ गए होंगे। उन्होंने भी धन छोड़कर उस ओर बढ़ा। पहुँचने पर बड़े भाई करमा के द्वारा करमराजा का अपमान देखकर धरमा को बड़ा दुःख हुआ। उसने करमराजा की सेवाकर अपने बड़े भाई के लिए करमदेव से क्षमा याचना की । परन्तु उसकी परीक्षा लिए बिना उसे माफ कैसे कर देते। दूसरी ओर उधर पड़ाव में छोड़ेगए धानादि की भी चोरी हो गई। इसका परिणाम यह हुआ कि धीरे–धीरे करमा की कृषि एवं सारी सम्पत्ति नष्ट होने लगी। अपने छोटे भाई की कृषि पूर्व से भी अधिक होने लगा। इसका कारण की जानकारी हो जाने के बाद उसने करमराजा की खोज में निकल पड़े। देश–परदेश इसकी खोज में करमा को कई परीक्षाओं से गुजरना पड़ा। सर्व प्रथम रास्ते में करमा को प्यास लगी । उसने इन्द्रा–पोखरा के पास गया, जब पीने के लिए पानी हाथ से उठाया तब देखा की पानी में कीड़े भरे हुए हैं। उसने पानी न पीकर आगे बढ़ा। जाते–जाते एक गाँव में करमा ने गाय और बछड़ा को देखा। उसने उस गाय–बछड़ा के मालिक को सारा वृतांत सुना दिया। उसको दया आ गई और जब करमा को दूध देने के लिए बछड़ा को गाय के पास लाया तब गाय भाग गई और गाय को बछड़ा के पास लाया तो बछड़ा भागा। इस तरह से करमा को गाय का दूध नहीं मिल सका। हैरान होकर करमा आगे बढ़ने लगा कि गाय वाला ने करमा से कहा तुमको करमराजा मिलें तो मेरा भी यह गुण–दोष पूछते आना, क्यों इस प्रकार की घटना घटी। गाय पकड़ते.................तो...............गाय । फिर करमा करमराजा की तालाश में आगे बढ़ा। उसे जंगल में पके डूमर के फल मिले। उसने खाने के लिए तोड़ा तो उसमें भी कीड़े भरे हुए थे। उसने आँख मून्दकर खा गया। जाते–जाते पके आम मिले, आम बड़ा मिठा था पर उसमें भी कीड़े भरे हुए थे। फिर जाते–जाते किसी गाँव में चूड़ा बनाते ढेंकी की आवाज सुनाई पड़ी। उसके पास जाकर करमा ने अपनी भूख मिटाने के लिए चूड़ा वाले से चूड़ा मांगा और उसे भी सारा वृतांत

बता दिया। चूड़ा वाली जब चूड़ा देने के लिए उठना चाही तब वह भी पीढ़े में लटक गई और उठ नहीं सकी। उसने भी करमा को चूड़ा नहीं दे सकी। हैरान होकर करमराजा का नाम जपकर करमा आगे चलने लगा कि चूड़ा वाली उसका गुण–दोष करमराजा से पूछकर आने को बोली। अन्त में जाते–जाते रास्ते में समुद्र के किनारे एक मगर मिला। करमा ने उसे भी सारा वृतांत कह सुनाया तथा समुद्र पार ले जाने की याचना की । मगर भी करमा को समुद्र पार करने का वादा किया, परन्तु वह भी करमा से कहा कि मेरी पीठ में जामून का पेड़ क्यों है ? इसका भी करमराजा से गुण–दोष पूछते आना। फल–फूल खाते हुए करमा को करमराजा की खोज में अनेकों मुसिबतों को झेलना पड़ा। अंत में उसे सात समुद्र के पार में करमराजा या करम देव का दर्शन हुआ । करमा की भक्ति देख करमराजा प्रसन्न होकर प्रगट हुए कि एक दिन उसका उबाला धान भी अंकूर हो गया। करमा ने भक्ति के साथ करमराजा की सेवा की। करमराजा ने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा – हे वत्स ! तुम जहाँ भी जाओगे, तुम हमें पाओगे । यह कहकर ब्रह्मरूप करमदेवता अन्तरलीप्त हो गए। इसी समय से पुनः करमा का अहँकार एवं दुःख दूर हो गया। वह धनवान हो गया, और एक दिन स्वदेश लौट गया । करमा, करमराजा के उपदेशों का विधि पूर्वक पालन परम्परानुसार करते हुए अमन–चैन का जीवन जीने लगा ।

करमा जब स्वदेश लौट रहा था, तब गाय वाला के पास गया और बताया कि तुमने किसी दिन राजपरिवार को पूजा के लिए दूध नहीं दिया था । इस कारण तुम्हारे हमारे साथ इस तरह की घटना घटी। चूड़ा वाली को बताया कि किसी समय इस ओर करमराजा गुजर रहे थे, तब तुमने उसे दान स्वरूप चूड़ा नहीं दी थी । मगर से कहा कि तुम मनुष्य के रास्ते में तुम काँटा डालता था जिसकारण पीठ पर जामून का पेड़ निकला ।

अतः झारखण्ड के आदिवासी प्रागैतिहासिक काल से झारखण्ड और भारत में हैं । सिंधु घाटी–सभ्यता से लेकर भारत के उत्तरी–पूर्वी क्षेत्रों एवं भारत चीन–तिब्बत की सीमावर्ती इलाकों में ये फैले हुए थे।

मुण्डा आदि जनजातियों की आबादी भारत के उत्तरी–पूर्वी भूभाग, चीन–तिब्बत की सामीवर्ती क्षेत्रों, हिमालय की तराई एवं सिंधुघाटी तक फैली हुई थी । उराँव जाति की जनसंख्या सिंधुघाटी–सभ्यता, हिमालय की तराई तथा भारत के उत्तरी–पूर्वी भागों में मुण्डाओं तक थी । क्योंकि उराँव–मुण्डा, हो, खड़िया, असुर और लोहरा, संताल आदि जनजातियाँ एक ही वंश के थे। ये जनजातियाँ आदि द्रविड़ या प्राक् (Pre-Dravidian) अथवा प्रोटो–आष्ट्रोलाईड (Proto-Austradloid) प्रजाति के हैं । प्रारम्भ में इनकी एक जाति, समाज, संस्कृति, धर्म एवं राजनीति थी । उपर्युक्त जातियों के नाम कालान्तर में उनके काम और पद आदि के अनुसार हुआ । इन नामों के पहले गोत्र ही उनकी जाति और वर्ण थे। उस काल में ये द्राविड़ कहलाते थे । फिर बाद में असुर, राक्षस, किरात कहलाये । जो आज के आदिवासी या जनजाति कहलाते है। दिन–रात कोड़कर खेती के लिए खेत बनाना और खेती करने वाला उराँव या उरांग, मिट्टी कोड़कर भट्ठा में लोहे का निर्माण करने वाला असुर कहलाया । लोहा से कृषि आदि के लिए औजार के निर्माता लोहरा हुआ । कृषि उद्योगों के अतिरिक्त द्राविड़ों की राज व्यवस्था में गाँव का संचालन करने वाला ग्राम प्रधान बोहाः (मुण्डा) पड़हा का पड़हाराजा, पड़हा मंडस के संचालक (बाइस पड़हाराजा, पाँच पड़हाराजा आदि) महापड़हा के राजा पड़हा राजा और एक संसार का सिडबोंगाराजा और धर्मेश या धर्म सर्वोच्च था । इसी आधार पर इनकी (आज के आदिवासियों की) भाषा द्रविड़ थी । तब से अब ये दो भाषा समुदाय एवं मूल जाति में बंट गये । आदि द्रविड़ भाषा परिवार की भाषा उराँव जाति की रही। द्राविड का अर्थ द्रव्य या आभूषण से है । इससे अलग होकर मुण्डा जाति एवं उनकी भाषा मुण्डारी एक स्वतंत्र मूल भाषा आग्नेय परिवार का निर्माण किया । आग्नेय का शाब्दिक अर्थ अग्नि के समान या आग से निकला होता है। बाद में मुण्डाओं को कोल एक घृणित शब्द से संबोधित

किया गया तथा इसी कोल शब्द के आधार पर उनकी भाषा को कोलेरियन की संज्ञा दी गई । आग्नेय भाषा परिवार के अन्तर्गत मुण्डारी, हो, संताली, खड़िया, असुरी, आदि भाषाएँ हैं, जो मिलकर एक बड़ी जन समुदाय द्वारा बोली जाती है । मानव वैज्ञानिक हड्डन के अनुसार आदि–द्रविड़ से द्रविड़ भारत की सबसे प्राचीन प्रजाति नहीं है ।

भारत में उराँव, मुण्डा, हो, खड़िया, संतान आदि की जन–संख्या प्राकृतिक सम्पदा की खोज में परदेश गयी थी । ये सिन्धु नदी के किनारे–किनारे खैबर घाटी, बोलनघाटी पार कर काबुल घाटी होते हुए भूमध्यसागर के तटीय भूभागों में चले गये थे । इन्हीं का एकदल आगे बढ़ते–बढ़ते अफ्रिका की ओर गया था । इसी भूमध्यसागर के तटीय भूभागों से उराँव और मुण्डा आदि पुनः काबुल, खैबरघाटी एवं बोलन घाटी होते हुए उसी रास्ते से स्वदेश सिन्धुघाटी में वापस आ गये थे । तत्तपश्चात् अफ्रिका का दल भी इरान–इराक होते हुए उसी रास्ते से ई०पू० साठ हजार वर्ष पहले भारत लौटा । इन्होंने सिन्धुघाटी में आर्यों के पूर्व (आज के मुण्डा, उराँव, हो, संताल और खड़िया आदि) आदिवासियों ने एक उच्च कोटि की द्रविड़ सभ्यता एवं संस्कृति का निर्माण किया था। इसके प्रशासनिक एवं राजनीतिक संस्थाओं का विवरण पहले दिया गया है । इस द्रविड़ सभ्यता संस्कृति को "हड़प्पा, मोहन जोदाड़ो" भी कहा जाता है । जिसका विस्तार सिन्धुघाटी से बिहार में झारखण्ड तक था। मोहन जोदाड़ो–हड़प्पा का सही रूप **"मोयोद जो–दाड़ा एड़प्पा"** है । अर्थात् मोयोन (मोन) या **मोएहोन=एक, मुण्डारी भाषा** से संबंधित है। "ओन्द / ओंद = एक, द्रविड़ (उराँव) भाषा से । "जो" का अर्थ 'फल' आग्नेय (मुण्डारी) भाषा से है । दाड़ो या दाड़ा=डाली, मुण्डारी से और 'डाड़ा'=डाली या शाखा, उराँव भाषानुसार है । 'हड़प्पा' का सही रूप है 'एड़प्पा'= घर या इमारत, उराँव भाषा से प्रयोग किया जाता है। अतः 'मोहन–जो–दाड़ो' या मोयोन जो दाड़ा, एड़प्पा 'का अर्थ है एक ही डाली में फल लगने वाला पेड़ के पास का घर या इमारत । इसी वृक्ष के नीच उपर्युक्त आदिवासी एक धर्म के रूप में **"कर्मकाण्ड"** पूजा अनुष्ठान किया करते थे ।

यहाँ एक प्रश्न है कि कौन सा पेड़ रहा होगा कि उसकी दो ही डालियां थी और एक ही डाली में फल लगते थे ? इसका तात्पर्य है कि मोहन जो दोड़ो या 'मोयोन जो दाड़ो' एक वृक्ष का नाम था । यह वृक्ष एक सखुआ पेड़ और एक करम पेड़ (परिजात वृक्ष) मिलकर एक धड़ का एक विशाल वृक्ष था । धड़को देखने में नहीं लगता था कि दो पेड़ का संगम है । ऊपर की ओर डालियों में सखुआ के पूरे हिस्से को एक डाली एवं करम के सम्पूर्ण भाग को दूसरी डाली, मिलकर "दो", एक पेड़ की दो डालियाँ थी । साल के हिस्से में फल लगने वाली डाली के एक भाग से ओंद=एक, मोद्=मोयोद/मोन=एक, जो=फल, डाड़ा=शाखा, दाड़ो या दाड़ा=डाली हुआ । दूसरी डाली करमवृक्ष की थी । इसमें फल नहीं लगने वाली डाली थी । इसलिए इसे परिजात वृक्ष भी कहते हैं या करम पेड़ में फल लगते भी हैं तो उसके फल–फूल से मनुष्य का कोई उपयोगिता नहीं है । अतः यह फल नहीं लगने वाली डाली या शाखा थी । इसी बड़ा वृक्ष की दो डालियों में एक ही डाली में फल लगने वाला वृक्ष के पास का घर या इमारत, एडप्पा ही हड़प्पा कहलाया ।

अतः सिन्धुघाटी या हड़प्पा, मोहन जो–दाड़ो से उराँव मुण्डा आदि जनजातियों का आगमन वर्त्तमान पंजाब के कुरूक्षेत्र, उत्तरप्रदेश, उत्तर–मध्यभारत एवं दक्षिण भारत में भी इनकी जड़े जमी थी । मध्य भारत में ये सुर–असुर दो वर्ग में बँट गये । यहाँ इन दोनों में संघर्ष हुई। अन्त में ईश्वर ने प्रागैतिहासिक काल में इन आदिम जातियों को धरती माता क गर्भ या कोख से निकली सम्पूर्ण प्राकृतिक सम्पदा से परिपूर्ण वर्त्तमान झारखण्ड की धरती या स्वर्ग में लाकर बसा दिया । जो आज के आदिम जाति, आदिवसी या अनुसूचित जनजाति हैं । इन्हीं आदिवासियों ने यहाँ सर्वप्रथम आकर जंगल झाड़ साफकर खेती करना आरम्भ किया, गाँव बसाया राज्य व्यवस्था कायम की थी । यहाँ भी हड़प्पा, मोहन जो दाड़ो (एड़प्पा, मोएहोन–जो–दाड़ो) प्राक् द्रविड़, आदिवासी सभ्यता–संस्कृति की स्थापना की थी । जिसका प्रमाण धुमकुरिया है। सम्पूर्ण झारखण्ड राज्य को इन्होंने खुखरा (राँची पहाड़ी घास खूखरा या कुकरा के अनुसार) नाम

दिया था । प्रागैतिहासिक खुखरा प्रदेश में द्रविड़ अर्थात उराँवों का साम्राज्य था । जिसकी राजधानी रोहतासगढ़ थी । उप राजधानी खुखरा (पुरानी राँची, हेहल–बाजरा) थी । गाँव पंचायत, पड़हा पंचात, पड़हा मंडल, महा पड़हा मंडल और संसार इनकी शासन व्यवस्था थी द्रविड़ों की इस शासन व्यवस्था में अपने प्रतिनिधि का चुनाव लोकतांत्रिक पद्धति से प्रत्यक्ष रूप से होता था । संभवतः अतिपूर्व काल में मुण्डा–उराँव और हो – ये तीन श्रेणियाँ एकात्रित थी और एक परिवार की तरह रहती थी..... मालूम पड़ता है । छोटानागपुर में कोलों को संस्कृत **"मुण्डा"** नाम ग्रहण करने से पहले हो लोग पृथक हो गये थे । बाँसरी बजरही, पृष्ठ–06.

अतः इसकी इस संगठनात्मक एकता को **"आदिवासी युग"** कहना अधिक उपयुक्त होगा । झारखण्ड में उराँव–मुण्डा आदि जन–जातियों के वंशज असुर जाती भी थी । असुर भी द्रविड़ के अन्तर्गत ही शामिल था और द्राविड़ भी असुर में । असुर एक जातीय ईकाई का नाम जो लोहे का उद्योग चलाता था । इस प्रकार द्राविड़ों के राज्य में इनके वंशज असुरों की प्रबल जन संख्या एवं उद्योग थी । इनके अनेक गढ़ों में असुरों का अधिकार था । "आजमगढ़ में अब भी जनश्रुति है कि श्रीरामचन्द्र जी के समय में इस प्रांत में........................ .... और असुरों थे जो कोसल राज के अधीन थे।" कुरूक्षेत्र (कुवल बालकृष्णण मुस्तर) पृष्ठ – 13 ।

अतः द्राविड़ों के कई गढ़ इस प्रकार थे –

गढ़ो के नाम		**वर्त्तमान नाम**
कलेंजरगढ़	–	बुन्देलखण्ड में
चितौरगढ़	–	दक्षिण भारत के चित्रकुट में ।
नगरवाड़गढ़	–	उत्तर प्रदेश के करकट्टा अंचल में ।
धरवाड़गढ़	–	महाराष्ट्र में ।
पालीगढ़	–	बिहार के पटना जिला के पाली गाँव ।

पीपरगढ़	–	पूर्वी चम्पारण जिले का पिपरा में ।
बिनगापहाड़गढ़	–	भागलपुर का माँदर पर्वत क नजदीक ।
हल्दीनगरगढ़	–	मुंगेर का हल्दी गाँव में ।
लकनीरगढ़	–	बिहार तिरहुत गोरखपुर याबलिया जिला के पास ।
राजगृहगढ़	–	पश्चिम चम्पारण के गंढ़क नदी के पास ।
खानदेशगढ़	–	हैदराबाद में ।
आजमगढ़	–	उत्तर प्रदेश में ।
पालुमगढ़	–	पलामु में ।
खारवाड़गढ़	–	मध्य प्रदेश में ।
बिनजागढ़	–	उत्तर प्रदेश के प० आगरा कोलारा गाँव ।
सुरगुजगढ़	–	मध्यप्रदेश का सुरगुजा ।
ढोंएसागढ़	–	बेड़ो (झारखण्ड) में ।
लोहरागढ़	–	लोहरदगा जिला (झारखण्ड) में ।
लजरागढ़	–	झारखण्ड में ।
हजारीगढ़	–	हजारीबाग जिला ।
उदयपुरगढ़	–	खिजरी प्रखण्ड .... ।
सोनपुरगढ़	–	खूँटी प्रखण्ड ।
रायपुरागढ़	–	छत्तीसगढ़ में ।

इसके अलावे कई छोटे–छोटे गढ़ एवं पड़हा थे । प्रत्येक गढ़ एक गोत्र पर आधारित था । इसी काल में असुरों द्वारा फैलाए गए प्रदूषण की रोक थाम के लिए खूँटी सबडिविजन में असुरों और मुण्डाओं में संघर्ष हुई थी । अन्ततः सिंगबोंगा राजा की मदद से मुण्डाओं ने असुरों पर विजयी हासिल कर ली थी । असुरों के सभी गढ़ों में मुण्डा राजा बन बैठे । असुरों की पराजय और मुण्डाओं के उत्कर्ष के साथ ही साथ प्रागैतिहासिक काल का अन्त हुआ और प्रचीन काल का आरम्भ यहीं से माना गया । यह काल भारतीय इतिहास के अनुसार छठी शताब्दी और सातवीं शताब्दी था । मुण्डा राजाओं की राजधानी सुतियाम्बे थी । सुतिया मुण्डा प्रथम मुण्डा राज्य थे । अन्य गढ़ों का विवरण इस प्रकार है ।

ा मुण्डा – कालेंजगढ	13. लखो मुण्डा – ख
मुण्डा – चितौरगढ़	14. सामु मुण्डा – अ
मुण्डा – नगरवागढ़	15. पोटा मुण्डा – बि
मुण्डा – धरवाड़गढ़	16. बेली मुण्डा – ल
मुण्डा – पालीगढ़	17. सनिकामुण्डा – सु
ा मुण्डा – पीपरवाढ़	18. दुखु मुण्डा – प
ुण्डा – नंदनगढ़	19. लेम्बा मुण्डा – ख
मुण्डा – बिनगा पहागढ़	20. जितराम मुण्डा –
मुण्डा – लकनीरगढ़	21. सालु मुण्डा – ह
मुण्डा – नंदनगढ़	22. रैयपुराढ़ इन दोनों
मुण्डा – राजगृहगढ़	सुतिया मुण्डा ने जो
मुण्डा – रूइदागढ	था अपने पास रख

को सुचारू रूप से चलाने के लिए सुतिया मुण्ड
बाँटा था । इसके प्रत्येक खण्ड तीन गढ़ों का था
वं गढ़ों का नाम इस प्रकार थे :–

मुण्डा के अधीन – कालेंजरगढ़, चितौरगढ़ ओर न
ुण्डा तथा उसके अधीन में – धारवाड़गढ़, पाल
ढ़
ण्डा और उसे अधीन में – बिनगागढ़, हरदीनग
गढ़
ण्डा और उसेक अधीन में – नंदनगढ़, राजगृह
गढ़
ुण्डा और उसके अधीन में – खानदेशगढ़, आज
ाढ़
ण्डा के अधीन में – सुरजुसगढ़, लोहरगढ़ और पा
ण्डा और उसके अधीन–खरवाड़गढ़, लचड़ागढ़ और ह

पुनः सातवीं शताब्दी का अन्त होते मुण्डा राजाओं का पतन होने लगा । आठवीं शताब्दी के आरम्भ में या 64 ई० को द्वितीय एवं अंतिम मुण्डा राजा मदरा मुण्डा के हाथ से अपने ही बालपोस बेटा नागवंशी फणिमुकुट राय को झारखण्ड का महाराजा पद सौंप दिया । इसी राजनीतिक परिवर्तन के साथ ही झारखण्ड में आदिवासी युग एवं प्राचीन काल का अन्त और मध्यकाल का आरम्भ हो गया । यह काल भारतीय इतिहास के अनुसार हिन्दू राज्य की स्थापना का राजपूत काल का एक अंग था । इसके बाद नांगवंशी राजाओं में दुर्जन साल के शासन काल में मुगलों का आगमन खुखरा को देखने के उद्देश्य से हुआ । इन्होंने खुखरा या कुकराह का सही उच्चारण न कर सकने की वजह से इसे खंखारा या कोकरा कहा । इसके बाद से मुगलों ने सम्पूर्ण झारखण्ड को अपनी अधीन में कर लिया तथा पहले बताये गए

गढ़ों में मुसलमान राजा–जमींदार बन बैठे । यह मध्यकाल का मुगल काल है। 19वीं शताब्दी(12 अगस्त 1765 ई०) से झारखण्ड में अंग्रेजी शासन (ईस्ट इंडिया कम्पनी) की स्थापना के साथ ही मुगल काल का अन्त होकर आधुनिक काल की शुरूवात हुई । फिर भी अंग्रेजी शासन काल में झारखण्ड का मख्य उत्तराधिकारी नागवंशी और मुगल ही थे । शासन व्यवस्था अंग्रेजी हुकुमत की थी। 15 अगस्त 1947 को भारत परतंत्र से मुक्त हुआ और 1957 ई० तक जमीन्दारी भेस्ट होने तक झारखण्ड का मुख्याधिकार नागवंशी और मुगलों के हाथ में था । स्वतंत्र काल में झारखण्ड बिहार राज्य सरकार के साथ था । सन् 2 अगस्त 2000 ई० को झारखण्ड अलग राज्य पुनर्गठन का बिल लोकसभा में पास हुआ, और 15 नवम्बर 2000 की आधी रात को झारखण्ड राज्य अपने अस्तित्व में आ गया बिहार से अलग हो कर। इस भांती कदम–दर–कदम यहाँ की राजनीतिक व्यवस्था बढ़ते–बढ़ते नवगठित झारखण्ड राज्य की राजधानी राँची है, प्रथम मुख्य मंत्री **श्री बाबूलाल मरांडी** और राज्यपाल **श्री प्रभात कुमार** थे ।

उराँव जाति के गोत्र

उराँव जनजाति के गोत्र अपनी परम्परा या आदि गोत्र की व्यवस्थानुसार अर्थात् सिंधुघाटी के गोत्र की स्थापना या सृष्टि के मुताबिक अब तक यथावत् हे । यहीं कारण है कि इनके गोत्रों की कुल संख्या में अत्याधिक या अनावाश्यक वृद्धि नहीं हुई है। फिर भी काल विशेष एवं स्थान विशेष पर उनकी जीवन घटनाओं ने कुछ गोत्रों को अवश्य ही जन्म दिया है, तथा गोत्र के मूल अर्थ के साथ पर्यायवाची अर्थरूप जुटते गये हैं । अतः कुल नव गोत्रों की संख्या से बढ़कर साठ के लगभग मिलती है । परन्तु यह भी इनका आदि है ।

झारखण्ड के अन्य आदिवासियों की तरह ही उनके गोत्रों के अलग–ललग अर्थ हैं । अधिकाशं गोत्रों का तात्पर्य उनेक वाहन या सवारी से है । इस वाहन को प्राप्त करने के पीछे धर्मेश या ईश्वर ने इनकी राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं ऐतिहासिक व्यवस्था की स्थापना के लिए प्रदान की थी । समाज कें हर व्यक्ति के पदानुसार उनकी सवारी होती थी । वाहन के जानवर या पक्षी ही व्यक्ति का नाम, प्रतिभा एवं उनकी गरिमा होती थी । अब उस वंश धारा के लोग वाहन को गोत्र या टोटेम मानते हैं । यही गोत्र वंश उस समाज का मूल स्तम्भ है और उनके पूर्वज हैं ।

अब नीचे उराँव जाति के गोत्र एवं उनके अर्थों का विवरण इस प्रकार है :–

1. तिर्की या तिरकी/तिरकि=साँड ।

   पर्यायवाची अर्थ में – अमलताश/बन्दरलौरी एवं बाज=शिकारी पक्षी या रिची ।

2. अड़ो=बैंल ।

03. लकड़ा = बाघ या सिंह ।
(1) बाघवर = बाघ ।
(2) रूण्डा या बन्डो = वन विलार ।
04. एड़गो = चूहा ।
ओसगा = खेत चूहा ।
05. पेचा या खुसार = उल्लू पक्षी ।
06. गेड़े = बत्त्ख ।
07. तीरकुवार = तिथियों पक्षी या मोर ।
08. चिड़रा = गिलहरी
09. केरकेट्टा = केरकेट्टा पक्षी (केटकेट आवाज करती है)
10. ढेंचुवा = काले रंग की ढेंचुआ चिड़िया ।
11. खाखा = कौआ ।
12. सोनू गिधी = सोना या सफेद गीध ।
गिधि = गीध । रवनागिधि = बड़ा गीध ।
13. लंग टोप्पो = लंग पक्षी
14. टोप्पो = एक छोटी पक्षी ।
15. एक्का = होरो । अन्य रूप
कछुआ या कच्छप = कछुवा या होरो ।
16. गोदो = मगर ।
17. तिग्गा = बन्दर ।
18. हलमान = हनुमान ।
19. गाड़ी = बन्दर ।
20. मिंज = सर्प मछली ।
21. खलखो = पोठी मछली ।
22. बिन्हो = मछली
. लिन्डा = लिन्डा मछली ।
24. किन्डो = सेउर मछली ।
25. गड़ी = गाड़ी सिन्दुर वृक्ष या बन्दर का सिंदूर ।
26. बाड़ा = बरगद पेड़ ।
27. बखला = जलकुम्भी ।

28. खेस्स	=	धान ।
29. बेक	=	नमक ।
30. पन्ना	=	लोहा ।
31. बरहा	=	जंगली सुअर ।
32. खोया	=	सियार ।
33. नाग या खेता	=	नाग साँप ।
34. हुर हुरिया	=	विषरहित साँप ।
35. कुहू	=	कोयल ।
36. बड़वा, वरवा	=	जंगली कुत्ता/खोया ।
37. कुजुर	=	मुँजनी या कुजरी लतर ।
38. नीमा	=	धुमा साग ।
39. बीनको	=	तारा ।
40. ठिठियो	=	टिटहरी ।
41. किस्पोट्टा	=	सुअरआँतड़ी ।
42. लेण्डा	=	केंचुआ ।
43. दादेल	=	?
44. केओंद	=	केन्दका फल ।
45. कुदरी	=	कुन्दरी ।
46. कैथी	=	सब्जी का पौधा ।
47. कंदा	=	शकरकन्द ।
48. बाँधा	=	बाँध ।
49. जोभी	=	दलदल ।
50. गड़वा	=	सारस ।
52. बगुला	=	बलगा ।
53. आईदं	=	लम्बी मछली ।
54. तिड्डु	=	ताम्बा ।
55. वासा	=	एक गाछ ।
56. पुतरी	=	एक गाछ ।
57. पुसरा	=	कुसुम

मुण्डाओं के गोत्र

झारखण्ड आगमन तक अर्थात् प्रागैतिहासिक काल या आदिकाल में मुण्डाओं के गोत्रों की संख्या कम थी । असुरों को हराकर प्राचीन काल में झारखण्ड का सत्ता मुण्डाओं के हाथ में आया । अतः झारखण्ड का इतिहास काल (प्राचीन काल) के इस प्रारंभिक युग में मुण्डाओं ने पूर्ववत गढ़ों (ऐतिहासिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक व्यवस्था) सुदृढ़ बनाऐ के लिए अपनी नई राजधानी सुतियाम्बे में महाराजा सुतिया मुण्डा ने सर्व प्रथम मुण्डा जाति के गोत्र की पुनर्स्थापना की थी । क्योंकि इनके गोत्रों की संख्या कम थी । इस गोत्र पुनर्गठन के दौरान आदि गोत्र धारा को त्यागकर एक गोत्र के लोगों ने अपना अलग लगल गोत्र को अपनाये । यहीं कारण है कि अब इनके गोत्रों की संख्या सर्वाधिक हैं । आदि गोत्र जो यथावत हैं जिसका तात्पर्य सवारी से है । बाद के अधिकांश गोत्रों के अर्थ उनकी आर्थिक क्रिया –कलापों के अन्तर्गत जीवन में घटित घटनाओं या काम से संबंधित हैं ।

झारखण्ड के अन्य जनजातियों की भाँति मुण्डाओं में गोत्र का महत्व व्याप्त है । इसमें सगोत्र विवाह नहीं होता है जन–श्रुतियाँ हैं कि मुण्डा जाति में गोत्रों की वृद्धि शादी–विवाह में कुटुम्बता को सुलभ बनाने के लिए ही की गई थी । यह तो मान्य है ही और यह बाद की बात हो सकती है । पर मुण्डाओं के गोत्र पुनर्गठन का मुख्य उद्देश्य सत्ता संभालने के लिए था । क्योंकि मुण्डाओं के पहले द्राविड़ों और असुरों के शासन काल में प्रत्येक गढ़ एक गोत्र विशेष पर केन्द्रीत थे उसी आधार पर मुण्डाओं ने भी हर एक गढ़ को एक गोत्र पर स्थापित की थी । जिसका लिखित विवरण इस प्रकार है ।

01. सुतिया मुण्डा को – हंस गोत्र	12. गोरमा मुण्डा को – लुगुन गोत्र
02. डुका मुण्डा को – होरो गोत्र	13. सोमरा मुण्डा को – बुदु गोत्र
03. कुरा मुण्डा को – केरकेट्टा गोत्र	14. लेदा मुण्डा को – हेरेंज गोत्र
04. बेलो मुण्डा को – कौवा गोत्र	15. उदय मुण्डा को – नाग गोत्र
05. लाखो मुण्डा को – धान गोत्र	16. मंगता मुण्डा को – ओड़े कण्डीर
06. गंगु मुण्डा को – ढेचुवा गोत्र	17. रैईया मुण्डा को – टुंटी गोत्र
07. लेंबो मुण्डा को – डुंगडुंग गोत्र	18. समु मुण्डा को – बाघ गोत्र
08. जितराय मुण्डा को – जोजोवर गोत्र	19. पोटा मुण्डा को – हेम्ब्रोम गोत्र
09. बिरसा मुण्डा को – बारू गोत्र	20. सनिका मुण्डा को – डहंगा गोत्र
10. चम्पा मुण्डा को – सांगर गोत्र	21. दुख मुण्डा को – हऊ (तोपनो) गोत्र
11. करमा मुण्डा को – तिड़ू गोत्र	22. परन्तु सलु मुण्डा टुण्डु अर्थात् आखिरी = मुण्डु गोत्र ।

उपर्युक्त नाम से संबंधित गढ़ों की चर्चा पहले की गई है । परन्तु उन गढ़ों में मूल गोत्र के अलावे अन्य गोत्र एवं जाति के लोग भी थे। इस प्रकार मुण्डाओं ने झारखण्ड में अपना साम्राज्य कायम की थी ।इस एक गोत्र पर आधारित गढ़ की स्थापना की परम्परा आदिवासी राजाओं की थी और आदिवासी युग या प्रागैतिहासिक काल से प्राचीन काल छठी शताब्दी तक थी। आदिवासियों के बीच यह परम्परा अभी भी वर्त्तमान है। इनके समाज में एक गोत्र पंचायत है । प्रत्येक गोत्र पर आधारित मुण्डा जाति में सासाड. आदि–आदि। कुछ गोत्र के अर्थ निकालने के लिए लोक कथाएँ हैं । कुछ गोत्रों के अर्थ अज्ञात हैं । मुण्डा तथा आदिवासी समाज में कुछ लोग अपने गोत्र को जानते हैं, परन्तु उसका अर्थ नहीं बतला पाते हैं । उसी तरह अब तक कुछ गोत्रों के अर्थ अस्पष्ट हैं । मुण्डाओं के गोत्रों का विवरण इस प्रकार है :–

01. तिरकि / तिरकी / तिर्की = साँड ।

पर्यावाची अर्थ – भूरे रंग की कपोत

02. लकड़ा = बाघ / सिंह

कुला = बाघ, बगे, बघे, बधि = बाघ, बगेआर = बाघ से,

बण्डो / रूण्डा = वनबिसलार ।

03. मूस = मूसा ।

04. एरगट = खेत चूहा ।

05. चोरिया / चौरिया = एक प्रकार चूहा ।

06. भूस = मोटा चूहा ।

07. हँस = हँस ।

08. टिड़ = जवान भैंसा ।

09. पण्डु = नाग । पण्डुबिंग=नाग साँप, नागवर=नाग से ।

10. केरकेट्टा = केटकेट आवाज करने वाली पक्षी (केरकेटा)

11. ढेंचुआ = ढेंचुवा पक्षी ।

12. कोआ = कौआ ।

13. कौंगड़ी = सफेद कौआ ।

14. लंग = मक्खी पकड़ने वाली पक्षी ।

लंग चेण = मधुमक्खी पकड़ने वाली पक्षी ।

लंगबोदरा = कक्खी मार पक्षी ।

15. होरो = कछुवा, कच्छप ।

16. लिन्डा = लिन्डा मछली ।

17. सिसिरमी = एक मछली ।

18. भलु = भालू ।

19. बले = मुंगरी मछली । बले मुचु = मुंगरी ।

20. कुरजरी = कुजूर ।

21. आईद = मछली ।

22. साँप = शकरकन्द । टेरे या डेडे सांगा=रामकंदा या जंगली कन्दा । एदेल सांगा = सेमलाकार के पत्ते वाला कन्द जिसका जड़ खाया जाता है ।

23. ओड़ेया = जंगली पक्षी । (उड़िःचेड़े)

चाउली कुटुड. ओड़ेया = पीठ पर चावल ढोने वाला ।

सुकुरी पुटाः ओड़ेया = मारे गऐ सुअर बाल साफ करने वाला ।

24. सुकुरी = सुअर ।

25. कुड = सकुर ।

26. कुंकल = मिट्टी से घर बनाने वाली चिड़िया ।

27. कौड़ीवार = सीपी चुनने वाला ।

28. कुदा = जामून ।

29. कंडीर = आधा मन चावल खाने वाला ।

30. सेता कंडीर = गलती से हरिण समझाकर कुत्ते खाने वाला ।

31. कन्डुलना = कुसुम फल ।

कमल = कमल फूल ।

32. थुरसुम = बड़े वृक्ष अमरबेल की तरह लगने वाली छाता ।

33. गुड़िया = पेड़ ।

34. संडी गुड़िया = मुर्गा (सलकर गुड़िया) । सायमुर्गा = सुतुर्मुर्ग । सांडिल = मुगा ।

35. गाड़ी = बड़ा बन्दर ।

36. गुमिबुरू = (केड़ा सरना) भैंस पूजा सरना ।

37. चम्पिया = ?

38. गिदि चम्पिया = ?

39. छेवका = छेदन या रोकना ।

40. छेरेया = ?

41. जड़िया = जाड़िया गाँव का नाम ।

42. जाते = जाते गाँव का नाम ।

43. जगदेव = हाथी ।

44. जतरोम = ?

45. जोजो = इमली ।

46. जोजोहार = खट्टासाग ।

47. जोजो = खटाई (मधुमक्ख छत का खट्टा किस्सा खाने वाला

48. लुगुन = लुदुम आर्थात् पेड़ के खोह में मधुमक्खी छत छूने का आभास (कोमल)

49. टुटी = बाजरा ।

जोमटुटी = खाने वाला बाजरा ।

50. बजराय = बाजरा ।

51. चोरेया = ?

52. टंडाडिया टोओ = नीलकंठ पक्षी ।

53. ताम्बर = ताम्बा ।

54. तिड़ु = जंगली कन्द या छोटा तगड़ा भैंस ।

55. तिरूंग = टिरूम पक्षी (जो मधुमक्ख खाती है) ।

56. टीडो = ?

57. टेओः = लकड बघा ।

58. डांग/डहंम्प = लम्बा पतला डंडा ।

59. डांगूवर = कविता या गाना में अविवाहित ।

60. डुंगडुंग = मछली ।
61. डुंडुआर = डुड़िआ = ?
62. डोड़राय = वृक्ष का खोह ।
63. तरईवा = गुलाबी, फूलों का पौधा ।
64. तिलमिंग = तील ।
65. तनि = जंगली कुत्ता ।
66. सिवान = सियार
67. तेरोम = छोटी मधुमक्खी ।
68. तोपनो/देमता = पेड़ का लाल चींटी ।
69. दिगुरूअड़ = ?
70. दुदुरिया = ?
71. धान = बाबा (धान) ।
72. नागवंसि = नागवंश का ।
73. नागरूआर = ?
74. निसा = नशीला पेय ।
75. पंडुमुन्डू = जमींदर ।
76. पुतम = पड़की (जंगली कबुत्तर)
77. पुर्ती = राख रंग ।
रंगा पूर्ति = मुर्गी ।
चुटु पूर्ति = चूहा ।
चुपुद पूर्ति = झाड़ी ।
हसा पूर्ति = साग ।
हुनि पूर्ति = चूहा ।
होलोंग पूर्ति = रोटी, आटा ।
कलिपूर्ति = बहरा ।

पुपु पुरति = ?

सनड़ि पुरति = मुर्गा ।

सरूकद पुरति = मानकंद ।

सोसो पुरति = भेलवा ।

तारोएःपर्ति = राख साग ।

78. बगडरिअ, बगड़िअ = बगेरी ।

79. बड़िड. = ?

80. बड़ायउद = काला रंग का वन खुखड़ी ।

81. बरजो = बरूजो (कुसुम का फल) ।

82. जोरा बरजो = बरजोः घराने के वंशज जिन्होंने झोरा जाति (नाविक) के चुल्हे में खाना बनाया ।

83. बरू = कुसुम गाछ ।

84. बरला = बड़ का वृक्ष ।

85. बरलंगा = बाँस ।

86. बिन्डा = नेठो ।

87. बोदरा = ?

88. रम्बड़ा बोदरा = उरद दाल ।

89. सकिड़ि बोदरा = ?

टेबों बोदरा = टेबों गाँव के आस पास रहने वाले बोदरा ।90. वूढ़= पेड़ ।

91. बुदु = छोटी मच्छली ।

92. बुलुंग = नमक ।

93. बेंगड़ा = बैगन ।

94. चुड़निया = ?

95. भूत कुंअर = ?

96. भेंगरा = छोड़े का मांस जिन्होंने खाया था ।

97. भेंगराज = एक चिड़िया

98. मनकी = कर वसुलने वाला ।

99. मुंडु = धान बांधने वाला मेढ़ा जो जलकर खत्म हो गया।

100. मामा = भगिना = गाँव का नाम ।

101. मुंदरी = ?

102. मौकल = एक पक्षी ।

103. संकुरा = ?

104. संकुरा = ?

105. संडिगरई = ?

106. संडिल मुरूम = मुर्गा ।

107. संडिल = पक्षी ।

108. सपुअल = गैंता की नोंक ।

109. समद = ?

110. समारिअः = ?

111. सरगद = उपजाऊ ।

112. सलुमीना = जंगल की मैना ।

113. साल = सखुआ ।

114. सिंगा = सींग ।

115. सिरका = एक छोटा पेड़ ।

116. सुरिन = मक्खी पकड़नेवाला लाल पक्षी ।

शिकार के दौरान नील गाय को तीर से मारा गया । उस दिन सिर्फ वह बुरी तरह घायल हुई और जंगल में भाग गई । दूसरे दिन तीर से बींधी घायल पाई गई । उसका तीर निकालने से लेकर मांस बनाने और बांटने तक की क्रियाओं को अलग–अलग लोगों ने किया इस लिए प्रत्येक के गोत्र के साथ उन क्रियाओं का नाम लगा दिया गया जैसे :–

117. सोय मुरूभ = सड़ी हुई नील गया ।
118. तुईग सोय = तीन चलाने वाला ।
119. गेद सोय = मांस काटने वाला ।
120 समःसोय = हड़ी को चूरकरने वाला ।
121. जंग सोय = हड्डी काटने वाला ।
122. पतड़ा सोय = पत्ता तोड़कर लाने वाला ।
123. अटेद सोय = पत्तियों को लगाने वाला ।
124. ओर सोय = नील गया को खींचकर लाने वाले ।
125. तिलसोय = पत्तो में गाया माँस बांटने वाला ।
126. हयद गड़ा = जोंक से भरा हुआ गढ़ा ।
127. हमसई = महाबघ ।
128. हसा = जंगली साग ।
129. हड़ = पेड़ में रहनेवाली लाल चींटी ।
130. हुरूमसुकु = मधुमक्खी ।
131. हुरहुरिया = बीष रहित साँप ।
132. हेमबोः = हेमरोम का विकार ।
133. हेमरोम = हेमबोरोम, हेमब्रोम = लसोड़ा पेड़ ।
134. हेंडें = वतांली पक्षी ।
हालोग्डे. = रोटी ।

खड़िया जाति के गोत्र

झारखण्ड के प्रायः सभी आदिवासियों की एक जाति में कई वर्ग–भेद हैं । जैसे – मुण्डा जनजाति में होड़ो मुण्डा और खंगर मुण्डा आदि हैं । इन दोनों में विवाह संबंध नहीं जोड़ते हैं । किन्तु इनका एक नाम मुण्डा जाति है । उसी भाँति खड़िया लोग तीन वर्ग के होते हैं – दूध खड़िया, ढेल्की खड़िया और पहाड़ी खड़िया । "छोटानागपुर की अन्य जातियों के समान इनमें भी गोत्र–प्रथा जाती है । सिर्फ मयुरमंज के पहाड़ी खड़िया इस संस्था से वंचित है । हाँ, मनभूम और सिंहभूम के रहनेवाले गोत्र प्रथा को कुछ मानते हैं । विचित्रता यह भी है कि मयुरभंज के सगोत्र, आपस में शादी–सगाई जोड़ते हैं । यो मयुरभंजी, अपने पदित (उपनाम) और अपनी संज्ञा (उपाधि) के अन्दर शादी तो कर सकता है; पर अपने घराने के परिवार के साथ विवाह वर्जित है ।" अर्थात् – अपने परिवार से निकटतम संबंधी से शादी नहीं कर सकते हैं।

खड़िया लोगों के प्रत्येक दल के अपने–अपने गोत्र हैं । परन्तु पहाड़ी खड़िया दल के गोत्र का विवरण नहीं मिलता है । ढेलकी खड़िया के आठ गोत्र हैं – "(1) मुरू=कछुवा (2) सोरेन (सोरंग सेरेंग) या तौरंग=पत्थर या चट्टान (3) सामाद=एक हरिण ? अथवा बागे=बटेर (4) बालिहा=एक पुरूष (5) चारहाद या चारहा=एक चिड़िया (6) हंसदा या डुंगडुंग या आइन्द=एक लम्बी मच्छली (7) मैल=मैल अथवा किरो=बाघ (8) तोपनो=एक चिड़िया ।"

खड़िया के नव गोत्र माने जाते हैं –

डुंगडुंग	=	मछली (सांपाकार मछली
मुल्लु	=	कछुआ
सोरेङ.	=	पत्थर चट्टान और टुकु
बिलुंङ.	=	नमक ।
किड़ो :	=	बाघ (खतरनाक बाघ जो
केरकेट्टा	=	पक्षी (आश्विन माह में अ वाला पक्षी)
बा :	=	धान नामक फसल ।
टेटेटोहोंञ	=	टिटिहरी पक्षी । और
टोःपो	=	पक्षी (एक प्रकार के अधिक निकलता है) ।"

"कुछ ऐतिहासिक कारणों से खड़िया जाति
छ गोत्रों का अन्य रूप भी निकल आया
करण और उराँव करण हुआ है । जो निम्नलि
न्दवार, बाः का बरला और धनवार, किड़ोः का
र, टेटे का बागे और तिर्की ।

लोहरा जाति के

लोहरा जाति सम्पूर्ण झारखण्ड राज्य के
दो–तीन परिवार या इससे भी अधिक की संख
गोत्र उराँव और मुण्डा आदि आदिवासियों के
अर्थ है। उराँव तथा मुण्डा क्षेत्र में रहने वाले
धिकांश संख्या उराँव की तरह हैं । कुछ मुण
वाले लोहरा जाति के गोत्र मुण्डाओं के गोत्र

हो जनजातियों के क्षेत्र में पाये जाने वाले लो
अतः इनके गोत्रों के आलोक में हम कह सकते
तथा मुण्डा जनजाति की शाखा है । जनश्रुति
उराँव और मुण्डा के वंशज हैं । प्रारम्भ में इन
थापना के लिए अपने बीच का काम का बंटवा
करने वाला लोहरा मुण्डारी में 'बड़ाए' अर्थात्
जिसने लोहे के औजार आदि का निर्माण करने
जंगल–झाड़ साफ करना, कोड़कर खेत बनाने
नके बीच एक मूल व्यक्ति मुण्डा कहलाया ।
कालान्तर में इनकी एक क्रिया–कलाप भी
हरा, उराँव और मुण्डा नामक जाति की संज्ञा
प्रकार लोहे का काम करने वाला से लोह
उराँव क्षेत्र के लोहरा उराँव भाषा–संस्कृति ए
भाषा–संस्कृति के अनुसार हैं । इनकी (लोहर
ई मातृभाषा एवं संस्कृति नहीं रही होगी । फि
कांश गोत्र उराँव गोत्र से अधिक मिलते जुल

चे कुछ गोत्र और उनके अर्थ प्रस्तुत किय ज

= साँड ।
= बाघ या सिंह ।
ण्डा = वन–विलार ।
डो = वन विलार ।
= कछुवा
रो = कछुवा ।
= बजरा ।
= घोड़ा खानेवाला ।
= नागसाँप ।

07. हुतिंग = छोटे चूहे जो बहुत की संख्या में रहते हैं ।
08. ईन्दवार =
09. विश्वकर्मा = आदि ।

हो जाति के गोत्र

क्र०सं० गोत्र	क्र०सं० गोत्र	क्र०सं० गोत्र
01. अल्डा	17. बिरूआ	33. डांगील
02. अंगरिया	18. बोदरा	34. दौंरिया
03. बागें (बागेसोरा)	19. बीयपाई	35. देवगम
04. बालमुचु	20. बोबोंगा	36. दोगी
05. बन्डा	21. बोरोय	37. दोंगी
06. बन्डिया	22. बुन्दुआ	38. दोराई
07. बांकिरा	23. बूड़िउलि	(दोराइबुरू)
08. बानरा	24. बुडुमा	39. डुकरी
09. बांसिंग	25. बुतिया	40. दुरसुली
10. (1) बारेंग	26. चाकी	41. गगराई
(2) बरई	27. चेरोवा	42. गन्जु
11. बारदा	28. चम्पिया	43. गिलुआ
12. बारी	29. चातोम	44. गोडसीरा
13. बोरजो	(चातोम्बा)	45. गुइया
14. बारला (मारला)	30. चातर	46. गुन्डिया
15. भेंगरा	31. चिकीद	47. बुल्दुआ
16. भूमिज	32. चोड़ा	48. हाईबुरू

क्र०सं०	गोत्र
49.	हसदा
50.	हेम्ब्रोम
51.	हेस्सा
52.	हिरिम
53.	होरहागा
54.	हुजिया
55.	जामुदा
56.	इचागुटु
57.	जारिका
58.	जेराई
59.	जेराईजोपोइ
60.	जोजो
61.	जोजोखां
62.	जोंको
63.	काइका
64.	केरीम (कायोम)
65.	कलुण्डिया
66.	कन्डाईबुरू
67.	कान्डेयांग
68.	करीवा
69.	कायोम
70.	केराई
71.	केराईबुरू
72.	कोन्डांगकेल

क्र०सं०	गोत्र
73.	को:कुइया
74.	कोड़ाट
75.	कुदादा
76.	कुल्डी
77.	कुंकल
78.	कुन्ठी
79.	कुन्टिया
80.	कुरली
81.	लागुरी
82.	लामाय
83.	लोआदाः
84.	लगुन
85.	मारला
86.	मारली
87.	माटी (माटीसोय)
88.	माटीसोय
89.	मेलगान्डी
90.	मेरेल (मारला)
91.	मुन्डा (दिगी मुण्डा)
92.	मुन्डरी
93.	मुन्दुईया
94.	मुतुरी
95.	ओमोंग
96.	पाड़ेया
97.	पिंगुवा
98.	पुरती

क्र०सं०	गोत्र
99.	समद
100.	सान्डिल
101.	सबैया
102.	सेकेरा
103.	सिदु
104.	सिजुई
105.	सिन्कु
106.	सिरका
107.	सोय
108.	कुम्बुई
109.	सुन्डी
110.	सुरी (सुरीन)
111.	सुरिन
112.	तैसुम
113.	तामसीय
114.	तापेः
115.	तेःबरई
116.	तिरिया
117.	टिटिंगी
118.	तियु
119.	टोबोगा
120.	तोन्डांगबेल
121.	तोपनो
122.	तोरकीद
123.	तुबीद
124.	तुबीद
125.	सुंती
126.	उगुर बोलो
127.	उगुर सान्डी



लेखक परिचय :-

डॉ० सिकरादास तिर्की

जन्म : 20मई 1954 ई० के आस पास

स्थान : भण्डरा, खूँटी (राँची)

शिक्षा : एम.ए. (मुण्डारी), पी. एच. डी. (मुण्डारी)

सेवा कार्य :

अध्यापन

जनजातिय एवं क्षेत्रीयभाषा विभाग

रामलखन सिंह यादव कॉलेज, राँची।

प्रकाशित रचनाएँ :-

(1) बाचाण्डुः आन तोअउ

(2) झारखण्ड के आदिवासी एवं उनके गोत्र

(3) आदिवासी पत्रिका एवं दैनिक राँची एक्सप्रेस

शुल्क रू0 20/- मात्र

मुद्रक : पाल प्रिंटिंग प्रेस, डोरण्डा. ☎ : 2480552, 3102666(M)